इकाई–3 चित्त वृत्तियाँ

3.1 प्रस्तावना :

प्रिय पाठको इकाई 2 में आप चित्त और चित्त की भूमियों के ज्ञान से अवगत हो चुके हैं। चित्त और चित्त की भूमियों के विषय को पढ़ते समय आपके सामने एक शब्द कई बार आया और वो शब्द था वृत्ति। अब प्रस्तुत इकाई में हम चित्त की वृत्तियों पर विस्तृत चर्चा करेंगे और वृत्तियों के प्रकारों और इनकी उपादेता पर प्रकाश डालेंगे।

हम जानेगें की वृत्तियों के प्रभाव से मानव किस प्रकार प्रभावित होता है और ये वृत्तियाँ किस प्रकार मानवीय व्यक्तित्व को आकार प्रदान करती है। सामान्य जीवन में हम भाववृत्ति, मनोवृत्ति आदि शब्दों को सुनते ही वास्तव में ये सभी चित्त की इन वृत्तियों पर ही आधारित है। योग सूत्र के रचनाकार महर्षि पतंजलि ने इन वृत्तियों की संख्या पांच बताई है। और वह क्रमशः प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा, स्मृति है।

3.2 उद्देश्य :

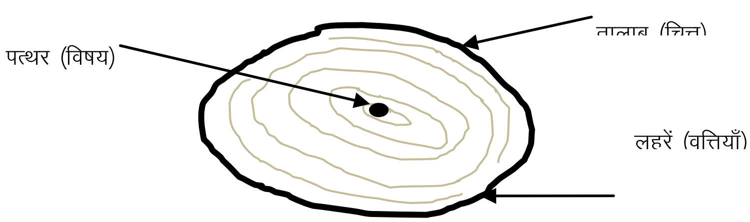
प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- चित्त की वृत्तियों के अर्थ को समझ सकेंगे
- चित्त की वृत्तियों के सकारात्मक और नकारात्मक पक्ष का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- चित्त वृत्तियों के व्यावहारिक ज्ञान से मानव जीवन पर पड़ने वाले उनके प्रभाव और मानव जीवन में उनकी उपादेयता का विश्लेषण कर सकेंगे।

3.3 चित्त की वृत्तियाँ :

पिछली इकाई में आपने कई बार वृत्ति शब्द को पढ़ा आइये अब इस शब्द और इसके अर्थ पर विस्तृत चर्चा करते हैं –

योगदर्शन में चार अतःकरण (मन, बुद्धि, अहंकार व चित्त) और दस बाह्य करण (पंच ज्ञानेन्द्रियाँ, पंच कर्मेन्द्रियाँ) को विषयों के ज्ञान हेतु और प्रतिक्रिया करने का साधन माना गया हैं, इन अंतःकरण और बाह्य करणों के द्वारा विषयों के प्रति जो ज्ञानात्मक परिणाम है। वहीं वृत्ति है। अर्थात् बुद्धि द्वारा निश्चय करना, अहंकार द्वारा अभिमान करना, मन द्वारा संकल्प–विकल्प और चित्त द्वारा संस्कार संग्रह तथा कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों द्वारा विषय ग्रहण कर क्रिया करना आदि सभी को वृत्ति कहा जा सकता है। किन्तु यदि हम मात्र चित्त की वृत्ति की बात करें तो जब चित्त इन्द्रियों के माध्यम से विषय के सम्पर्क में आता है। तब यह चित्त उस विषय का ही आकार ग्रहण कर लेता है। चित्त के द्वारा विषय के आकार को ग्रहण करने यह घटना ही चित्त की वृत्ति कहलाती है। पूर्व में हम पढ़ चुके हैं कि जब पुरुष के चैतन्य का प्रकाश चित्त पर पड़ता है, तो चित्त भी चैतन्य हो उठता है और इस चैतन्यता की अवस्था में ही चित्त विषयों के प्रति क्रिया करना आरम्भ कर देता है। इसी को चित्त वृत्ति कहते हैं। चित्त में उत्पन्न होने वाली इन अनित्य वृत्तियों का क्रमप्रवाह निरन्तर चलता रहता है। ये वृत्तियाँ ही चित्त में संस्कारों का संग्रह करती है और संग्रहित संस्कार ही पुनः वृत्तियों का रूप ले लेते हैं। इस प्रकार यह चक्र अनवत चलता रहता है। वृत्तियों के व्यावहारिक रूप से समझने के लिए निम्न उदाहरण को ध्यानपूर्वक समझें –यदि हम किसी तालाब में एक पत्थर फेकें तो हम देखते हैं कि तालाब में उस स्थान से जहाँ पर वह पत्थर जाकर गिरा है, वहाँ से वृत्ताकार लहरें उत्पन्न होती है और ये लहरे किनारे तक जाती है। पुनः यदि कोई पत्थर तालाब में फेंका जाये तो यह लहरे पुनः उत्पन्न हो जाती है। उसी प्रकार चित्त एक तालाब है और पत्थर विषय तथा तालाब में उठने वाली ये लहरें ही वृत्ति जिन्हें हम चित्त वृत्तियाँ कहते हैं।



चित्र : 1

ये चित्त वृत्तियाँ जिस प्रकार की होती है मानव की भावनायें, अभिव्यक्ति, दृष्टिकोण आदि शारीरिक और मानसिक क्रियायें भी उसी प्रकार की हो जाती हैं जैसे हम जब काले रंग का चश्मा पहनते है तो हमें सब कुछ काला, हरा चश्मा पहनने पर सब कुछ हरा ही दिखायी देने लगता है। इसी कारण कभी हमें यह संसार अतिसुन्दर दिखायी देता है, और कभी शुष्क और नीरस, कभी तो हम किसी एक विचार के आवेग में बहते चले जाते है और कभी वही विचार हमें मूर्खता पूर्ण विचार लगने लगता है। चित्त की पांच वृत्तियों (प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा, स्मृति) के द्वारा ही व्यक्ति जीवन पर्यन्त सुख–दुःख का अनुभव करता है। वृत्तियों द्वारा जीवन में जब सुख की अनुभूति होती है तब हम उसे वृत्तियों का सकारात्मक तथा जब दुःख की अनुभूति होती है तब उसे हम वृत्तियों का नकारात्मक पहलू कहते हैं।

योग सूत्र में महर्षि पतंजलि ने वृत्तियों के इन दोनों पहलूओं को क्लिष्ट और अक्लिष्ट अर्थात् दुःखदायी और दुःख रहित बताया है। चित्त की वृत्तियों के उस स्वरूप की जो मानव को भोग की और प्रवृत्त करता है, उसे क्लिष्ट अर्थात् क्लेश कारक कहा गया है। और वृत्तियों के उस स्वरूप को जो मानव को योग की ओर ले जाता है उन्हें अक्लिष्ट अर्थात् क्लेश रहित कहा गया है। सत्व प्रधान वृत्तियाँ अक्लिष्ट और तमस् प्रधान वृत्तियाँ क्लिष्ट है।

जिन वृत्तियों के उत्पन्न होने का कारण अविद्या आदि पांच क्लेश (इन पंच क्लेशों का वर्णन योगसूत्र 2/3 में हुआ है।) हैं। वे वृत्तियाँ संस्कारों का संग्रह करती हैं जिससे जीवन कष्टप्रद हो जाता है। इसी कारण इन्हें क्लिष्ट वृत्तियाँ कहते हैं। किन्तु जो वृत्तियाँ अविद्या आदि पंच क्लेशों को नष्ट करती है, और चित्त में विवेक के प्रकाश को उत्पन्न करने में सहायक होती है। वे वृत्तियाँ जीवन में सुखप्रद होती है। अतः ऐसी वृत्तियों को अक्लिष्ट कहा गया हैं।

क्लिष्ट वृत्तियाँ क्लिष्ट संस्कारों और अक्लिष्ट वृत्तियाँ अक्लिष्ट संस्कारों को उत्पन्न करती है। उसी प्रकार ये क्लिष्ट व अक्लिष्ट संस्कार क्रमशः क्लिष्ट व अक्लिष्ट वृत्तियों को उत्पन्न करते हैं। और यह चक्र सतत् चलता रहता है। किन्तु योग के द्वारा सर्वप्रथम अक्लिष्ट वृत्तियों के द्वारा क्लिष्ट वृत्तियों को नष्ट किया जाता है और बाद में इन अक्लिष्ट वृत्तियों का भी निरोध कर दिया जाता है। जब क्लिष्ट वृत्तियों का पूर्ण निरोध हो जाता है, और मात्र अक्लिष्ट वृत्तियाँ ही शेष रह जाती है, तब सम्प्रज्ञात योग की प्राप्ति होती है और जब ये अक्लिष्ट वृत्तियाँ भी नहीं रहती तब योग के परम् लक्ष्य असम्प्रज्ञात योग की प्राप्ति होती है। तब चित्त वृत्तिशून्य हो जाता है, और चित्त का वृत्तिशून्य होना ही योग है।

अभ्यास प्रश्न भाग–1

1. एक शब्द में उत्तर दिजिए –

   (क) चित्त की कुल कितनी वृत्तियाँ हैं ?

   (ख) वृत्तियाँ चित्त में किसका संग्रह करती हैं?

   (ग) चित्त का वृत्तिशून्य होना क्या है?

2. लघु उत्तरीय प्रश्न

   (क) चित्त की वृत्ति क्या है ?

(ख) अक्लिष्ट वृत्ति से आप क्या समझते हैं?

(ग) क्लिष्ट वृत्ति का चित्त पर क्या प्रभाव होता है?

3.3.1 प्रमाण :

चित्त वृत्तियों में सर्वप्रथम प्रमाण पर चर्चा करेंगे। यही चित्त वृत्तियों में प्रथम वृत्ति है। इसका सम्बन्ध तथ्यों, परिस्थितियों और घटनाओं के अनुभव और सजगता पर आधारित ज्ञान से है। या इस प्रकार कहें कि जिसके द्वारा प्रमा अर्थात् ज्ञान की उत्पत्ति होती है उसे प्रमाण कहते हैं। प्रमाण के द्वारा ही इन्द्रियाँ विषयों को ग्रहण कर बुद्धि को उनका ज्ञान कराती हैं। प्रमाण की परिभाषा के अनुसार –

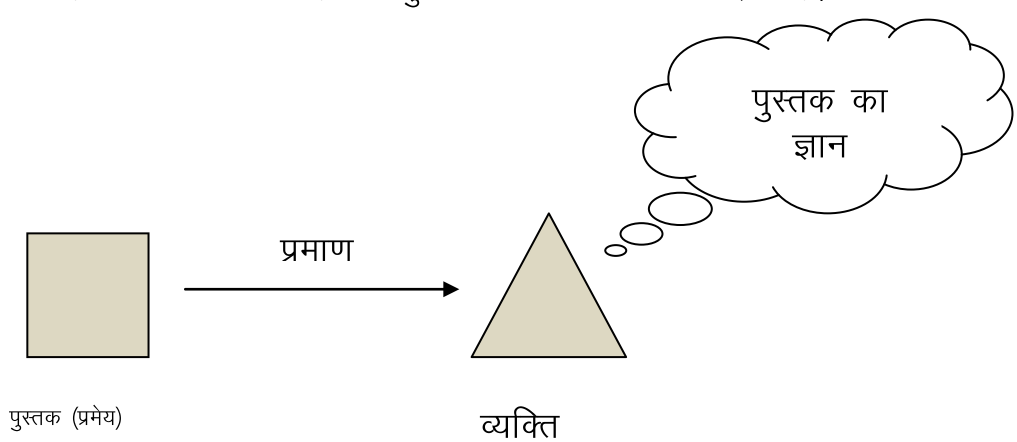
"जो कारण दोषों से रहित हो, अन्य ज्ञान से बाधित न हो, पूर्व से अज्ञात पदार्थ का ज्ञान कराता है उसे प्रमाण कहते हैं। (शास्त्र दीपिका –1/1/5)

यहाँ पर सबसे पहले प्रश्न उठता है कि ज्ञान क्या है? ज्ञान को चित्त का धर्म माना गया है, तथा चित्त की ऐसी वृत्ति जिसका विषय नवीन है, वह प्रमा (ज्ञान) है। अब यदि प्रमा और प्रमाण को जोड़कर देखा जाये तो विषय के सामान्य या विशेष रूप को ग्रहण करने वाली वृत्ति प्रमाण है, और चित्त में उस वृत्ति का बोध प्रमा (ज्ञान) है। उक्त विषय को और अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए निम्न चर्चा पर विशेष ध्यान दिजिए –

प्रमा (ज्ञान) की उत्पत्ति का आधार ये तीन तथ्य हैं

1. प्रमाता, 2. प्रमेय 3. प्रमाण।

प्रमाता विषय का ज्ञाता होता है, अर्थात् जिसे विषय का ज्ञान प्राप्त करना है। प्रमेय विषय को कहते हैं, तथा जिस साधन के द्वारा प्रमाता प्रमेय का ज्ञान प्राप्त करता है, वह प्रमाण है। इसे एक उदाहरण द्वारा और अधिक स्पष्टता से समझते हैं – माना किसी व्यक्ति को किसी पुस्तक के बारे में जानना है कि वह पुस्तक किस लेखक की है, इस पुस्तक में क्या जानकारी है, इत्यादि तब वह व्यक्ति उस पुस्तक को लेता है। और उसे प्रत्यक्ष रूप से देखता और पढ़ता है जिससे उसे उसका ज्ञान हो जाता है। यहां प्रमाता व्यक्ति है। प्रमेय पुस्तक है और प्रत्यक्ष प्रमाण है तथा पुस्तक के बारे में जानकारी ज्ञान है।



चित्र : 2

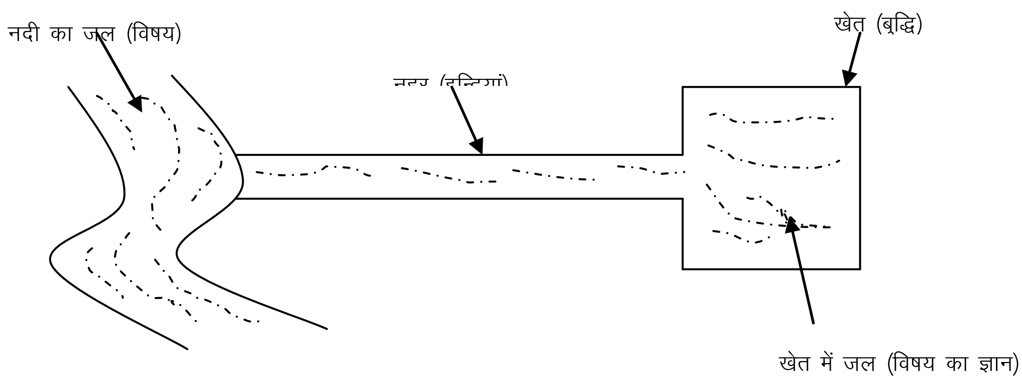
अतः प्रमाण के बिना हमें प्रमेय का ज्ञान नहीं हो सकता, प्रमेय की सिद्धि के लिए प्रमाण की आवश्यकता होती है। प्रमाण सदैव नवीन ज्ञानोत्पादक होता है। प्रमाण से ही हमें किसी विषय का ज्ञान होता है। योग दर्शन के अनुसार चित्त की यह प्रथम वृत्ति है, और प्रमाण संख्या में तीन हैं –

प्रमाण

प्रत्यक्ष | अनुमान | आगम

वैसे प्रमाण की संख्या पर भारतीय दर्शन में मतभेद हैं, जैसे – जैन दर्शन दो प्रमाण मानता है, प्रत्यक्ष और परोक्ष वहीं चार्वाक ने एक प्रमाण प्रत्यक्ष को मान्यता दी है, न्याय और वैषेशिक दर्शन प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द इन चार प्रमाणों को मानता है, तथा मीमांसा व वेदान्त प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापत्ति और अनुपलब्धि इन प्रमाणों को मानता है। किन्तु योग और सांख्य दर्शन प्रत्यक्ष, अनुमान और आगम इन तीन प्रमाणों को ही स्वीकार करते हैं। आइये अब इन तीनों प्रमाणों पर क्रमशः विस्तृत चर्चा करते हैं।

प्रत्यक्ष प्रमाण : जब इन्द्रियों का उनके विषय से सीधा संयोग होता है, तब उत्पन्न ज्ञान प्रत्यक्ष कहलाता है जैसे–आँख के द्वारा देखना, कान के द्वारा सुनना, जिह्वा के द्वारा स्वाद ग्रहण करना, नाक के द्वारा सुघंना तथा त्वचा के द्वारा स्पर्श करना। एक अन्य परिभाषा द्वारा इसे समझते हैं। जब किसी व्यक्ति को इन्द्रियों के माध्यम से वस्तु का प्रत्यक्ष ज्ञान होता है। तब बुद्धि विषय के आकार को धारण कर लेती है, यही प्रक्रिया प्रत्यक्ष प्रमाण कहलाती है। इस प्रक्रिया में इन्द्रियाँ महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। किन्तु वह मात्रा सहायक के रूप में होती है। मुख्य कार्य तो बुद्धि का है। इस चर्चा को और अधिक इस उदाहरण के द्वारा समझते हैं –जिस प्रकार खेत या क्यारियों तक नदी से जल को नहर की सहायता से पहुँचाया जाता है, उसी प्रकार इन्द्रियों के माध्यम से विषय का ज्ञान बुद्धि तक ले जाया जाता है, और बुद्धि इस विषय का ज्ञान प्राप्त कर लेती है।



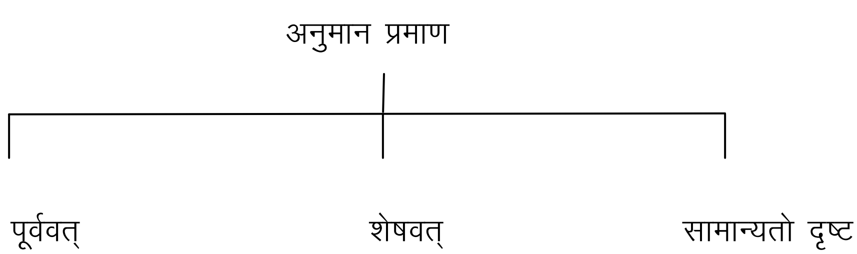
चित्र : 3

उक्त उदाहरण से स्पष्ट है, कि प्रत्यक्ष प्रमाण हमारी इन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान या अनुभव है। प्रत्यक्ष ज्ञान में इन्द्रियों की उपयोगिता उतनी ही है, जितनी खेत तक पानी ले जाने में नहर की इसीलिए वस्तु और बुद्धि के होते हुए भी यदि इन्द्रियों का अभाव हो तो प्रत्यक्ष ज्ञान सम्भव नहीं जैसे अंधे व्यक्ति को कोई भी वस्तु दिखाई नहीं दे सकती अतः वह सुन्दर दृश्य आदि का ज्ञान प्रत्यक्ष नहीं कर सकता। किन्तु फिर भी प्रत्यक्ष प्रमाण को बुद्धि का धर्म कहा गया है। इन्द्रियों का नहीं। इस प्रत्यक्ष प्रमाण की प्रक्रिया में बुद्धि की प्रधानता है। इन्द्रियों गौण भाव से रहती है।

अब तक आप प्रत्यक्ष प्रमाण के बारे में समझ गये होंगे। आइये अब अनुमान प्रमाण पर विस्तृत चर्चा करें।

अनुमान प्रमाण : सामान्यतः अनुमान प्रमाण से तात्पर्य किसी तथ्य के पीछे निहित कारक के अनुमान से है। जैसे यदि कुछ दूरी पर हमें धुआँ उठता दिखाई दे रहा है, तो हम निश्चित हि यह अनुमान लगाते है कि वहाँ धुआँ है, अतः वहाँ आग लगी है। इसी प्रकार किसी परिणाम को देखकर हम जब उसका विश्लेषण करते हैं, और उसके कारण के सम्बन्ध में एक निष्कर्ष निकालते हैं, तो इसे ही अनुमान प्रमाण कहते हैं। संसार में किसी भी विषय अथवा वस्तु का कोई न कोई चिन्ह अवश्य होता है, जिसके द्वारा हम उसे पहचानते हैं, भले ही वह विषय अथवा वस्तु प्रत्यक्ष रूप से हमारे सामने न हो। दर्शन की भाषा में विषय अथवा वस्तु के उस चिन्ह को लिंग और उस विषय या वस्तु को लिंगि कहते हैं। ऊपर दिये गये आग और धुँए के उदाहरण में आग लिंगि है, तथा आग का चिन्ह या लिंग धुँआ है। अतः यह अनुमान लगाया जाता है, कि जहाँ–जहाँ धुआँ है वहाँ–वहाँ आग का होना अनिवाय है। अर्थात् आग के न होने पर धुआँ नहीं हो सकता और यदि धुआँ है तो आग भी अवश्य होगी ऐसा अनुमान सदैव लगाया जाता है।

अनुमान प्रमाण के तीन प्रकारों का उल्लेख सांख्य दर्शन के ग्रन्थ सांख्यकारिका में किया गया है। किन्तु वहाँ उनका पूर्ण विवरण या नामों का उल्लेख नहीं किया गया। लेकिन न्याय दर्शन में अनुमान प्रमाण के तीन प्रकारों का विस्तृत वर्णन किया गया है। हालांकि योग सूत्र में अनुमान प्रमाण के प्रकारों का कोई उल्लेख नहीं किया गया किन्तु यहाँ पर अनुमान प्रमाण को और अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए न्याय दर्शन के अनुमान प्रमाणों के प्रकारों का उदाहरण सहित वर्णन किया जा रहा है। जिससे आप को अनुमान प्रमाण का विस्तृत ज्ञान प्राप्त हो सके। आइये समझते हैं, अनुमान प्रमाणों के तीनों प्रकारों को –



(क) पूर्ववत् अनुमान प्रमाण : पूर्ववत् अनुमान का सामान्य अर्थ है। पहले की तरह अर्थात् पहले के अनुभव के आधार पर किसी ज्ञान का अनुमान लगाना पूर्ववत् अनुमान कहलाता है। जेसे यदि कोई व्यक्ति कहे कि मैंने पहले देखा है, कि जहां कहीं भी धुआँ दिखे तो वहाँ आग अवश्य होगी। यहां पर व्यक्ति द्वारा आग का ज्ञान पूर्व के अनुभव के आधार पर अनुमान लगाना है। एक अन्य उदाहरण में यदि आकाश में काले घने बादल दिखाई देते हैं, तो सभी लोग वर्षा होने का अनुमान लगाते हैं, मौसम वैज्ञानिक भी इसका इस्तेमाल मौसम के पूर्वानुमान में बहुत अधिक करते हैं, अर्थात् पहले भी काले घने बादल होने पर वर्षा होने का अनुमान लगाया जाता रहा है। यही पूर्ववत् अनुमान प्रमाण है।

(ख) शेषवत् अनुमान प्रमाण : शेषवत् अनुमान प्रमाण में दृष्ट कार्य से अदृष्ट कारण का अनुमान किया जाता है। अर्थात् कार्य के होने के बाद कारण का अनुमान लगाना शेषवत् अनुमान कहलाता है। जैसे यदि हम नदी में बाढ़ देखते है, तो हम यह अनुमान लगाते हैं, कि शायद बहुत जोर की वर्षा हुई होगी तभी नदी में बाढ़ आई है। यहां पर नदी में बाढ़ कार्य है, जो की हो चुका है। और भारी वर्षा का अनुमान करना कारण है, जो की नदी में बाढ़ आने से किया गया है। अर्थात् भारी वर्षा के होने के बाद जो नदी में बाढ़ के रूप में कार्य शेष बचा उसका अनुमान करना शेषवत् अनुमान प्रमाण कहलाता है।

(ग) सामान्यतो दृष्ट अनुमान प्रमाण : जो कार्य सामान्य रूप से देखने को मिलता है उस कार्य के कारण का अनुमान सामान्यतोदृष्ट अनुमान प्रमाण कहलाता है। जैसे – कपडे को देखकर हम सामान्यतः अनुमान लगाते हैं, कि यह कपड़ा जुलाहे द्वारा बुना गया होगा या कुर्सी मेज आदि लकडी का सामान देखकर हम अनुमान लगाते हैं, कि यह कुर्सी मेज बढई ने बनाई होगी। एक अन्य उदाहरण के अनुसार दिन और रात होने पर हम सामान्यतः यह अनुमान लगाते हैं, कि पृथ्वी घूम रही है इसलिए दिन रात हो रहे है।

अब आप अनुमान प्रमाण को उसके भेदों सहित अच्छी प्रकार से समझ गये होगें। आगे हम आगम प्रमाण पर चर्चा करेंगे।

आगम प्रमाण : आगम प्रमाण के विषय में योगसूत्र के भाष्यकार महर्षि व्यास कहते हैं, कि "तत्त्वज्ञान करूणा और ज्ञानेन्द्रियों से पूर्ण व्यक्ति आप्त कहा जाता है, और जब वह आप्त व्यक्ति अनुभव किये गये ज्ञान को अन्य लोगों तक शब्दमय वाक्यों के द्वारा पहुँचाता है, तो उन शब्दों को सुनने से चित्त में जिस वृत्ति का उदय होता है, उसे आगम प्रमाण कहते हैं" इस कथन को यदि सरलता से कहें तो जो वस्तु जैसी है, उसे वैसी ही बताने वाला व्यक्ति आप्त कहलाता है, तथा उस आप्त व्यक्ति द्वारा कहे गये वाक्यों से उत्पन्न होने वाले ज्ञान को ही आगम प्रमाण कहते हैं। सांख्य दर्शन के ग्रन्थ सांख्यकारिका में इसे ही आप्त श्रुति तथा न्याय दर्शन ने इसे ही शब्द प्रमाण कहा है।

इस प्रकार सत्यवादी व्यक्ति, वेद तथा वेदों पर आश्रित अन्य सभी विधायें जैसे स्मृति, इतिहास, पुराण आदि द्वारा कहे गये वाक्यों से चित्त में जिस वृत्ति का उदय होता है। उसे आगम प्रमाण वृत्ति कहते हैं। आगम प्रमाण के उदाहरण हेतु हम अनेक योगियों एवं गुरुओं के द्वारा कहे गये ज्ञान को प्रस्तुत कर सकते हैं, जो हमारे द्वारा अनुभव नहीं किया गया किन्तु उन गुरुओं व योगियों के द्वारा वह ज्ञान अनुभव किया जा चुका है। अतः वह उस ज्ञान को हम तक पहुँचाते हैं। जिस पर हम पूरा विश्वास करते हैं, क्योंकि वह योगी गुरु ही आप्त व्यक्ति होते हैं, और उनके मुख से निकला ज्ञान ही आगम प्रमाण होता है।

अब तक आपने प्रमाण वृत्ति के प्रकारों को जाना अब –हम चर्चा करते है कि प्रमाण वृत्ति कब क्लिष्ट होती है, और कब अक्लिष्ट। प्रमाण के हमने तीन प्रकार पढ़े प्रत्यक्ष, अनुमान

और आगम। अब यदि प्रत्यक्ष प्रमाण के क्लिष्ट स्वरूप की बात करें तो – यदि हमारी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा किसी ऐसे विषय का प्रत्यक्षीकरण किया जा रहा है, जो हमारे चित्त को विचलित कर दे तो ऐसे प्रत्यक्ष प्रमाण को क्लिष्ट समझना चाहिए। जैसे नेत्रों द्वारा स्त्री सौन्दर्य का प्रत्यक्ष ज्ञान चित्त को चंचल बना देता है। अतः ऐसा प्रत्यक्ष ज्ञान क्लिष्ट हुआ इसके विपरीत यदि वह प्रत्यक्षीकरण जो चित्त में सात्विक विचार उत्पन्न करे वह अक्लिष्ट होगा। जैसे यदि नेत्रों का उदाहरण ही ले तो नेत्रों द्वारा अपने ईष्ट की मूर्ति या गुरु का प्रत्यक्ष होने पर चित्त में सात्विक वृत्तियों का प्रभुत्व होता है, जो समाधि मार्ग में सहायक है।

दूसरे क्रम पर अब हम अनुमान प्रमाण पर चर्चा करते हैं, कि वह कब क्लिष्ट होगा और कब अक्लिष्ट। जब अनुमान प्रमाण मोह और दुःख को उत्पन्न करे तो समझना चाहिए की वह अनुमान का क्लिष्ट स्वरूप है। जैसे यदि स्वाध्याय या ईश्वरोपासना करते हुए हमारी नासिका ज्ञानेन्द्रि को किसी विशेष भोज्य पदार्थ की सुगन्ध मिलने लगे और हम वहीं स्वाध्याय करते–करते या ईश्वरोपासना करते हुए तरह तरह के व्यजंन होने का अनुमान लगाने लगें तो हमारा चित्त किये जा रहे सात्विक मार्ग से हट कर चंचलता को प्राप्त हो जायेगा। या नूपुरों की ध्वनि को सुनकर स्त्री के होने का अनुमान चित्त को चंचल बना देता है। और यही अनुमान प्रमाण का क्लिष्ट स्वरूप है। किन्तु जब हमें कहीं वेदों की ऋचाओं के स्वरों के साथ धुआँ भी दीखाई दे, तो हम अनुमान लगाते है कि कहीं यज्ञ किया जा रहा है, और यदि हमारा चित्त यज्ञ जैसे सात्विक कार्यों की ओर बढ़ने लगे तब हमें समझना चाहिए की यह अनुमान का अक्लिष्ट स्वरूप है। क्योंकि ऐसा अनुमान हमारे चित्त को सात्विक कार्यों की और अग्रसारित करता है।

तीसरे क्रम पर यदि हम आगम प्रमाण की बात करें तो यह तभी क्लिष्ट होगा जब आप्त पुरुष द्वारा दिये गये ज्ञान को ग्रहण करने वाला जिज्ञासु अर्थ का अनर्थ कर दे। जैसे वेदों के उपदेशों का गलत अर्थ करके बलि आदि हिंसक कर्म करना। गीता के ज्ञान को युद्ध की हिंसा का समर्थक जान लेना आदि। अतः आगम प्रमाण मूलतः क्लिष्ट नहीं होता किन्तु यदि आप्त वचनों को ग्रहण वाला व्यक्ति ही वचनों के अर्थ को न समझ पाये तो यह आगम प्रमाण उस व्यक्ति (वचनों को ग्रहण करने वाला) के लिए क्लेश कारक होगा अन्यथा आगम प्रमाण अक्लिष्ट वृत्ति है जो कि समाधि मार्ग में अग्रसर होने में सहायक होता है।

इस प्रकार आपने प्रमाण के विषय पर विस्तृत ज्ञानकारी हासिल कि, आपने सबसे पहले प्रमाण के तीन प्रकार होते है, यह जाना उसके बाद प्रत्येक प्रमाण को अलग–अलग जाना और अन्त में यह भी जाना की यह प्रमाण वृत्ति कब क्लिष्ट अर्थात् क्लेश कारक होती है, और कब अक्लिष्ट अर्थात् अक्लेश कारक।

अभ्यास प्रश्न भाग–2

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें।
   (क) ज्ञान को ....का धर्म माना गया है।
   (ख) प्रमाता विषय का ....होता है।
   (ग) चित्त वृत्तियों के क्रम में सर्व प्रथम ....का स्थान है।
2. लघु उत्तरी प्रश्न
   (क) प्रमाण वृत्ति की परिभाषा दिजिए ?
   (ख) ज्ञान की उत्पत्ति के तीन कारक कौन से हैं ?

(ग) वेदान्त के अनुसार प्रमाण कितने हैं ?

3. सत्य असत्य बताइये।

(क) जब इन्द्रियों का उनके विषय से सीधा सम्पर्क होता है तब उत्पन्न ज्ञान प्रत्यक्ष कहलाता है। (सत्य/असत्य)

(ख) प्रत्यक्ष प्रमाण में बुद्धि गौण भाव से रहती है।
(सत्य/असत्य)

(ग) लिंग तथा लिंगि पर आधारित प्रमाण को अनुमान प्रमाण कहते हैं।
(सत्य/असत्य)

4. बहु विकल्पीय प्रश्न

(क) पूर्ववत् किस प्रमाण का प्रकार है।
अ. प्रत्यक्ष स. आगम
ब. अनुमान द. उपमान

(ख) वेद वाक्यों से उत्पन्न ज्ञान को किस प्रमाण के अन्तर्गत् रखा गया है।
अ. प्रत्यक्ष स. अनुमान
ब. आगम द. उपमान

(ग) तत्वज्ञान, करुणा और ज्ञानन्द्रियों से पूर्ण व्यक्ति होता है।
अ. असत्यवादी स. साहसी
ब. सामर्थ्यवान द. आप्त

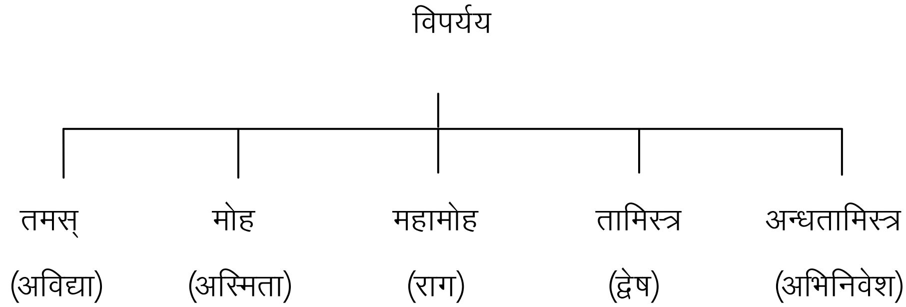
3.3.2 विपर्यय वृत्ति :

योगसूत्र में प्रमाण वृत्ति के बाद विपर्यय वृत्ति का उल्लेख किया गया है। अब इस शीर्षक में हम विपर्यय वृत्ति पर विस्तृत चर्चा करेंगे। विपर्यय का तात्पर्य मिथ्या ज्ञान से है। मिथ्या ज्ञान अर्थात् गलत ज्ञान या किसी विषय का गलत परिचय। वेदान्त दर्शन में विपर्यय का एक सबसे उत्तम उदाहरण है। रस्सी को सर्प समझ लेना। उदहरण कुछ इस प्रकार है, यदि अन्धेरे कमरे में किसी कोने में कोई रस्सी का टुकडा पड़ा हो तो हम उससे अचानक भयभीत हो जाते हैं, क्योंकि हम उसे सर्प समझ लेते है। किन्तु जैसे ही प्रकाश फैलता है, और कमरा प्रकाश से भर जाता है, तब हमें दिखाई देता है, कि जिसे हम सर्प समझ रहे थे वह तो मात्र एक रस्सी का टुकड़ा है। प्रायः हम सभी लोग विपर्यय के शिकार होते है। समाज में फैलने वाली झूठी अफवाह विपर्यय का सबसे बड़ा उदाहरण है। विपर्यय वृत्ति हमारी सजगता को भ्रमित कर देती है, जिसके कारण हम सही गलत का बोध नहीं कर पाते ऐसा कई बार तक होता है, जब हम बहुत ज्यादा क्रोध में हो या फिर किसी भावावेश में अथवा नशे में। जब हम किसी घटना विषय अथवा वस्तु से सम्बन्धित सभी तथ्यों, परिस्थितियों और कारणों की जानकारी प्राप्त किये बिना उस पर प्रतिक्रिया देते है, या उस पर विश्वास कर लेते है तब हमारे द्वारा कि गयी वह प्रतिक्रिया या विश्वास विपर्यय की श्रेणी का होता है।

इस विपर्यय चित्त वृत्ति को संसार की बीजभूत अविद्या भी कहा गया हैं। इस विपर्यय द्वारा अविद्या के अन्तर्गत पंच क्लेश अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष व अभिनिवेश आते हैं, इसके विषय में आप अलग से पढ़ेगें।

सांख्य दर्शन ने इस विपर्यय के पांच भेद बताये हैं। अतः विपर्यय को विस्तार से जानने के लिए यहाँ पर इन पर भी चर्चा कि जा रही है, हालांकि सांख्य दर्शन के ये विपर्यय के पांच भेद और योगसूत्र के पंच क्लेश एक जैसे ही हैं अंतर बस इतना है की सांख्य में इन्हें

विपर्यय कहा गया हैं और योग सूत्र में क्लेश। आइये अब विपर्यय के पांच भेदों को समझते है –



(क) तमस : आत्मा से भिन्न प्रवृत्ति, बुद्धि, अहंकार आदि को ही आत्मा मान लेना विपर्यय का पहला भेद तमस् है, इसे ही योग दर्शन ने अविद्या कहा गया है। उसके अनुसार अनित्य अशुचि, दुःख तथा अनात्मा को क्रमशः नित्य, शुचि सुख और आत्मा मान लेना ही अविद्या है।

(ख) मोह : देवता ऐश्वर्यो को प्राप्त करके अपने अमरत्व का अभिमान करते हैं, और इन्हें ही नित्य मानने लगते हैं, इसे ही सांख्य न विपर्यय का द्वितीय भेद मोह कहा है। वहीं योग दर्शन के अनुसार 'में ही सुखी, दुःखी कर्त्ता और भोक्ता है। इस प्रकार का अज्ञान अस्मिता है।

(ग) महामोह : सांख्य के अनुसार विषय सुखों को बार–बार प्राप्त करने की इच्छा ही महामोह नामक तीसरा विपर्यय है। योग दर्शन ने इसे राग कहा है। उसके अनुसार सांसारिक विषयों के सुख का भोग करने के पश्चात् उन्हें पुनः भोगने की इच्छा ही राग है।

(घ) तामिस्त्र : दुःख का अनुभव करने वाला व्यक्ति दुःख के प्रति अथवा उस दुःख को देने वाले के प्रति जो क्रोध का भाव रखता है, उसे ही सांख्य दर्शन तामिस्त्र कहता है और योग दर्शन इसे ही द्वेष कहता है।

(ड़) अन्धतामिस्त्र : व्यक्ति का जन्म होता है, और मृत्यु होती है। जिसका अनुभव व्यक्ति के चित्त में संस्कार के रूप में संग्रहित हो जाता हैं, जिससे वह मृत्यु के नाम को सुन कर ही घबराता है। और जीवन भर इस मृत्यु के भय से त्रस्त रहता है, मृत्यु के कारण होने वाली यह त्रास अर्थात् पीड़ा को ही सांख्य दर्शन अन्धतामिस्त्र कहता है तथा योग दर्शन इस मृत्यु के भय को ही अभिनिवेश कहता है।

इस प्रकार आपने विपर्यय को समझा विपर्यय हमारे जीवन की असफलताओं के लिए जिम्मेदार अकेला सबसे बड़ा कारण है किन्तु हमने यह भी पढ़ा है, कि यह वृत्तियाँ भोग और भोग दोनों की देने वाली है। अतः जब यह विपर्यय ज्ञान मनुष्य को पतन की और ले जाये तब इसे क्लिष्ट समझना चाहिए। जैसा की अब तक के विपर्यय के वर्णन से ज्ञात होता है। किन्तु जब यह विपर्यय मनुष्य की उन्नति का साधन बनता है। तब इसे अक्लिष्ट समझना चाहिए जैसे एक भक्त द्वारा ईश्वर की मूर्ति को ईश्वर समझ कर उसकी उपासना

करना विपर्यय वृत्ति का अक्लिष्ट स्वरूप है। इसमें भक्त मूर्ति को ईश्वर के समान मानने लगता है, जो कि मिथ्या है। किन्तु उसके ऐसा करने से उसका चित्त सात्विक वृत्तियों को अपनाने लगता है। तथा उसके मन में दया, करुणा, भक्ति आदि सात्विक भावनायें घर कर जाती है, ऐसा करने से उसे सम्प्रज्ञात समाधि की प्राप्त करने में सहायता मिलती है। अर्थात् ऐसी चित्त वृत्ति समाधि में सहायक होती है। अतः ऐसी विपर्यय वृत्ति अक्लिष्ट कहलाती है।

पूर्व में जो विपर्यय के पांच भेद सांख्य दर्शन के अनुसार बताये गये है, वे अविद्या के कारण है और अविद्या के कारण उत्पन्न विपर्यय वृत्ति क्लिष्ट कहलाती है।

अब आप विपर्यय वत्ति को भालि भांति जान चुके होंगे। आपने विपर्यय वृत्ति के बारे में जाना सांख्य दर्शन के अनुसार उसके भेदों को समझा और विपर्यय वृत्ति किस प्रकार क्लिष्ट और अक्लिष्ट हो सकती है इसको भी समझा। आगे अब आप तृतीय चित्त वृत्ति विकल्प के बारे में विस्तार से जानेंगे तो आइये विकल्प चित्त वृत्ति पर चर्चा प्रारम्भ करते हैं।

अभ्यास प्रश्न भाग–3

1. एक शब्द में उत्तर दिजिए –

   (क) विपर्यय का तात्पर्य कैसे ज्ञान से है?

   (ख) रस्सी को सर्प समझ लेना कैसी वृत्ति का उदाहरण है?

   (ग) सांख्य दर्शन में विपर्यय के कितने भेद बताये गये हैं?

2. रिक्त स्थान की पूर्ति किजिए–

   (क) विषय भोगों को बार–बार भोगने की इच्छा ....नामक विपर्यय है?

   (ख) भक्त द्वारा ईश्वर प्रतिमा को पूजना विपर्यय का ....स्वरूप है।

   (ग) मृत्यु से भय.......................नामक विपर्यय है।

3.3.3 विकल्प वृत्ति :

योग सूत्र के अनुसार "शब्द ज्ञान से उत्पन्न होने वाला सत्य वस्तु शून्य ज्ञान विकल्प है।" हम जानते हैं, कि इस परिभाषा को पढ़कर विकल्प वृत्ति के विषय में जानना आपके लिए एक कठिन कार्य हो सकता है। अतः इसे हम सरल शब्दों में समझते है – विकल्प वृत्ति का तात्पर्य निराधार विश्वास या कल्पना से है। वास्तव में विकल्प किसी भी ऐसे प्रकार के पदार्थ का ज्ञान है, जो कि वर्तमान में उपस्थित नहीं है। अर्थात् उस पदार्थ के अनुपस्थित होने पर भी उसके होने का अभास या ज्ञान होना विकल्प कहलाता है। इसे ही हम सामान्य भाषा में कल्पना कह देते हैं। इस कल्पना का सम्बन्ध हमारे मन–मस्तिष्क में उत्पन्न होने वाले विचारों के ऐसे आयाम से हो जो स्वतः निर्मित होते हैं, कई बार हमने अनुभव किया है, कि यह व्यर्थ की कल्पनायें तब ज्यादा उत्पन्न होती है, जब हम खाली समय बस बैठे होते है। हमारे पास करने को कोई कार्य नहीं होता जैसे कहावत है – खाली दिमाग शैतान का घर। इस प्रकार हमारे मन में खाली समय पर व्यर्थ के विचार व

कल्पनायें उत्पन्न होती रहती हैं। यह कल्पनायें हमारे चित्त रूपी शरीर में पहले छोटी–छोटी तरंगों के रूप में उत्पन्न होती है, किन्तु देखते ही देखते यह विशाल लहरों का रूप ले लेती हैं। यह भयंकर कल्पना शक्ति माया को उत्पन्न करती हैं। और जीवन को अस्त–व्यस्त कर देती है। जिस प्रकार टिड्डीयों का दल निरन्तर उड़ता जाता है, और मार्ग में आने वाली सारी हरियाली की चौपट कर जाता है, उसी प्रकार यह कल्पना या विकल्प वृत्ति भी हमारे मनोराज्य को मलिन कर देती है। हमारे विचारों को स्थूल बना देती है। अर्थात् हम स्वार्थ पूर्ण विचारधारा के मनुष्य बन जाते हैं। यह विकल्प वृत्ति हमारे बुद्धि विवेक पर हावी हो जाती है जिससे हम उचित अनुचित में भेद नहीं कर पाते और मात्र अपने स्वार्थ साधनों के लिए कार्य करने लगते हैं।

जब तक हमारा मन किसी यथार्थ तथ्य से जुड़ा नहीं होता अर्थात् जो वर्तमान में है, उस पर विचार नहीं कर रहा होता तब तक वह कल्पना (विकल्प) करने लगता है, कि उसके वर्तमान को ऐसा होना चाहिए या वैसा! वह सोचने लगता है, कि उसके पास धन, बल और ढेर सारा ऐश्वर्य होना चाहिए। उस समय वह व्यक्ति आत्म केन्द्रित होने लगता है, जिससे व्यक्ति अपने वास्तविक लक्ष्य से दूर होने लगता है।

यह विकल्प वृत्ति प्रमाण और विपर्यय से एकदम भिन्न होती है। हालांकि प्रमाण और विपर्यय भी अलग–अलग प्रकार के ज्ञान से सम्बन्धित हैं। जहां तक प्रमाण की बात है, प्रमाण पदार्थ के वास्तविक या आनुभाविक ज्ञान से सम्बन्धित है, जैसे वास्तविक पुष्प के दिखने पर पुष्प का प्रत्यक्ष ज्ञान हो जाना, उसकी मात्र सुगन्ध प्राप्त होने पर उसके अनुमान का ज्ञान हो जाना तथा किसी आप्त व्यक्ति के द्वारा पुष्प के बारे में बताने पर आगम ज्ञान हो जाना। वहीं विपर्यय मिथ्या ज्ञान है। जैसे यदि पुष्प की ही बात करें तो यदि पुष्प कागज का है, और उसके वास्तविक पुष्प होने का प्रतीत होना विपर्यय है। किन्तु यदि पुष्प है ही नहीं न ही वास्तविक और न ही कागज का परन्तु फिर भी मन मस्तिष्क में उसके आकार प्रकार का काल्पनिक चित्र विकल्प है।

अब हम विकल्प वृत्ति के क्लिष्ट और अक्लिष्ट होने पर चर्चा करते है। जैसा की हम पहले पढ़ आये हैं, कि वृत्तियों के क्लिष्ट और अक्लिष्ट रूप होते है, क्लिष्ट रूप भोग की ओर और अक्लिष्ट योग की ओर ले जाती हैं।

जब विकल्प वृत्ति व्यक्ति को आत्म केन्द्रित बनाती है, और उसे सांसारिक माया में और अधिक फंसती हैं। तब यह वृत्ति क्लिष्ट हो जाती है। जैसे यदि कोई व्यक्ति विकल्प वृत्ति के प्रभाव में आकर रात–दिन ऐसी कल्पनायें करने लगता है, जिसमें वह ढेर सारे ऐश्वर्य के बीच अपने जीवन को विलासिता से व्यतीत कर रहा है तब वह व्यक्ति उस विकल्प की पूर्ति हेतू अनुचित कार्यों को करने में भी नहीं हिचकिचाता वह धन और बल प्राप्त करने के लिए चोरी ड़कैती आदि हीन कार्यों का सहारा लेने लगता है। और ऐसे कार्यो से उसका जीवन निरन्तर भय और असुरक्षा की भावना में गुरने लगता है। चूंकि अनुचित तरीके से कमाया गया धन–बल मानसिक तनाव का कारण बनता है। इन विकल्पों की पूर्ति के लिए किये गये गलत कार्य बुरे संस्कार बनाते हैं, जिससे चित्त मलिन हो जाता है।

वहीं दूसरी ओर ऐसी कल्पनायें या विकल्प जो चित्त में बिना विक्षेप पैदा किये उत्पन्न होती है। वह अक्लिष्ट होती हैं। ऐसी विकल्प भावनायें विचारों में बिखराव नहीं लाती और व्यक्ति को विचार केन्द्रित बनाती है, जैसे यदि हम कृष्ण भक्त सूरदास की बात करें तो हम देखते है, की उन्होंने अपनी कृतियों में भगवान श्री कृष्ण के शिशु रूप का बड़ा मनोहारी वर्णन किया है। जब की नेत्रहीन सूरदास द्वारा कभी भी भगवान श्री कृष्ण की मूर्ति का प्रत्यक्ष

नहीं किया गया। हालांकि भक्त और भगवान का सम्बन्ध बहुत प्रगाढ़ होता है, और भक्त अपने भाव में ही अपने भगवान का प्रत्यक्ष कर सकता है। किन्तु फिर भी सूरदास जैसे अन्य भक्तों द्वारा विकल्प रूप में अपने ईष्ट के स्वरूप को देखना विकल्प वृत्ति का अक्लिष्ट रूप है। हठयोग साधन के एक प्रमुख ग्रन्थ घेरण्ड संहिता में ध्यान की स्थूल विधि में गुरु के स्वरूप और उसके चारों और के वातावरण का बड़ा ही दिव्य कल्पनिक वर्णन किया गया है। यहाँ पर यह काल्पनिक वर्णन विकल्प वृत्ति का अक्लिष्ट रूप है, चूकिं यह ध्यान की एक विधि है और इस प्रकार का ध्यान चित्त की वृत्तियों के निरोध उपायों के अन्तर्गत् आता है (वृत्ति निरोध के उपायों को आप अगली ईकाई में पढ़गें) कहने का तात्पर्य यह है, कि भक्त द्वारा अपने ईष्ट का मन में काल्पनिक स्वरूप का ध्यान भले ही विकल्प वृत्ति हो किन्तु यह योग मार्ग में साधक तत्व के रूप में कार्य करती है अतः यह वृत्ति अक्लिष्ट होगी।

इस प्रकार आपने विकल्प वृत्ति के बारे में जाना। इस चर्चा में आपने विकल्प वृत्ति क्या होती है? तथा प्रमाण, विपर्यय और विकल्प वृत्ति में क्या अन्तर होता है? इसको भी जाना और चर्चा के अंत में आपने जाना की विकल्प वृत्ति कब क्लिष्ट अर्थात् क्लेश कारक और कब अक्लिष्ट होती है। अतः अब आप विकल्प वृत्ति के ज्ञान से पूरी तरह परिचित हो चुके होंगे। जैसा की आप जानते ही हैं, कि विकल्प वृत्ति चित्त की तीसरी वृत्ति है। अब हम चित्त की चौथी वृत्ति निद्रा के विषय पर विस्तृत चर्चा करेंगे और इसके विभिन्न पहलूओं से अवगत होंगे। तो आइये चित्त की चौथी वृत्ति पर चर्चा शुरू करते हैं –

अभ्यास प्रश्न भाग–4

1. लघु उत्तरीय प्रश्न

   (क) योग सूत्र के अनुसार विकल्प वृत्ति को परिभाषित किजिए।

   (ख) विकल्प या कल्पना का सम्बन्ध कैसे विचारों से हैं।

   (ग) विकल्प वृत्ति हमारे विचारों पर क्या प्रभाव ड़ालती है।

2. सत्य/असत्य बताइए –

   (क) विकल्प को ही सामान्य भाषा में कल्पना कहा जाता है। (सत्य/असत्य)

   (ख) विकल्प वृत्ति का क्लिष्ट रूप हमारी बुद्धि को प्रखर बनाता है। (सत्य/असत्य)

   (ग) ईश्वर के स्वरूप की कल्पना विकल्प वृत्ति का अक्लिष्ट रूप है। (सत्य/असत्य)

3.3.4 निद्रा वृत्ति :

निद्रा वृत्ति ज्ञान के अभाव को कहते हैं। इसी का अन्य नाम सुषुप्ति भी है। योग सूत्र के भाष्यकार व्यास के अनुसार यह त्रिगुणात्मक होती है। अतः यह सुख स्वरूप, दुःख स्वरूप और मोह स्वरूप होती है।

निद्रा

सात्विक राजसिक तामसिक

सात्विक निद्रा के पश्चात् मनुष्य को बोध होता है, कि मैं सुख पूर्वक सोया और मेरा मन प्रसन्न रहा वहीं राजसिक निद्रा से जागे मनुष्य को ज्ञान होता है, कि मैं दुःख पूर्वक सोया और मेरा मन अकर्मण्यता के बोझ से बोझिल रहा तथा तामसिक निद्रा से जागे मेनुष्य को बोध होता है, कि मैं गहरी निद्रा में सोया पर मेरा मन भारी–भारी लग रहा है।

इस प्रकार यह सिद्ध होता है, कि निद्रा में भी त्रिगुणात्मक वृत्तियाँ उत्पन्न होती है। जो संस्कारों को पैदा करती हैं। अतः इन का निरोध होना चाहिए। इसी कारण से निद्रा को वृत्ति का रूप दिया गया है। पहले की तीनों वृत्तियाँ प्रमाण, विपर्यय और विकल्प बहिर्मुखी वृत्तियाँ थी। किन्तु निद्रा अन्तर्मुखी वृत्ति हैं। निद्रा की अवस्था में बाह्य जगत् का बोध नहीं रहता अर्थात् बाह्य जगत में क्या हो रहा है, इससे निद्रा की अवस्था में पड़े मनुष्य को कोई फर्क नहीं पड़ता। मन का शरीर और बाह्य वातावरण से सम्पर्क लगभग समाप्त सा हो जाता है। योगसूत्र में जिस निद्रा वृत्ति का वर्णन किया गया है। वह स्वप्नावस्था नहीं है, वह उससे आगे की स्थिति है।

अर्थात् वह गहरी निद्रा की अवस्था है, वहां पर किसी भी प्रकार की मानसिक क्षमता का अनुभव नहीं होता। इस अवस्था में सभी प्रकार के भावों के प्रति उत्तेजना का अवरोध हो जाता है; निद्रा वृत्ति मूल रूप से तमोगुण प्रधान होती है। यह तमोगुण रजस् और सत्व को दबा देता हैं, इसीलिए निद्रा के समय चित्त में तमोगुण का ही सर्वाधिक प्रभाव दिखाई देता है। उस समय चित्त में किसी भी प्रकार के ज्ञान का अभाव हो होता है, जैसे एक अन्धरे कमरे में जाने पर हमें किसी भी वस्तु का ज्ञान नहीं होता मात्र उन वस्तुओं को छिपाने वाले अंधकार का ही ज्ञान होता है। इसी प्रकार निद्रा वृत्ति के दौरान सभी प्रकार के ज्ञान का अभाव हो जाता है। निद्रा वृत्ति में चेतना एक सीमित दायरे में सिमट जाती है। विद्वान निद्रा की इस अवस्था को समाधि की अवस्था के समान मानते हैं। किन्तु दोनों में अंतर यह है, कि निद्रा में मन पूर्ण–रूप से अन्तर्मुखी हो जाता है, तथा मन और इन्द्रियों का सम्पर्क अवरूद्ध हो जाता है। परन्तु समाधि की अवस्था में मन पूर्ण रूप से अन्तर्मुखी नहीं होता अपितु मन सजग और सतर्क बना रहता है। इसके साथ ही वह आत्म नियन्त्रित भी रहता है, जो कि निद्रा अवस्था में नहीं होता निद्रा अवस्था में सजगता का कोई स्थान नहीं। सजगता के न होने से स्थान, काल, पदार्थ आदि किसी भी वस्तु या भाव का ज्ञान नहीं होता। निद्रा की अवस्था में जो अन्तर्मुखता आती है, वह स्वैच्छिक नहीं होती किन्तु इसके विपरीत ध्यान या प्रत्याहार की अवस्था में इन्द्रियों की अन्तर्मुखता स्वैच्छिक होती है। निद्रावस्था की अन्तर्मुखता पर मनुष्य का कोई नियन्त्रण नहीं रहता किन्तु ध्यान की अवस्था में प्राप्त अन्तर्मुखता पर साधक का पूर्ण –नियंत्रण रहता है। ध्यान या समाधि की अवस्था में भी साधक की अपने शरीर का ज्ञान न के बराबर होता है। कई बार वह

दिगम्बर होकर अपने ईष्ट के भाव में खो जाता है। किन्तु इस अवस्था में उसकी चेतना बहुत उच्च स्तर को प्राप्त कर चुकि होती है। समाधि की अवस्था में वह परमात्म चेतना के साथ तदाकार अर्थात् एकरूप हो चुका होता है। इसके विपरीत निद्रा अवस्था में चेतना संकुचिक व संकीर्ण हो जाती है, चेतना का संकुचित और संकिर्ण होना ही ज्ञान प्राप्ति में बाधक होता है।

अन्य चित्त वृत्तियों कि भाँति ही निद्रा वृत्ति की क्लिष्ट और अक्लिष्ट होती है। अब तक हमने निद्रा वृत्ति के जिस स्वरूप का वर्णन किया वह निद्रा वृत्ति का विलष्ट स्वरूप था। कितु जब निद्रा वृत्ति समाधि में कभी–कभी सहायक होती है। तब इसे अक्लिष्ट जानना चाहिए। निद्रा अवस्था जब इतनी प्रगाढ़ हो जाये की आत्मा की अनुभूति होने लगे तब यह अंतर्मुखता की अन्तिम अवस्था होती है। यहां पर सभी विषयों की अवधारणायें समाप्त हो जाती हैं। निद्रा की इस चरम अवस्था में व्यक्ति स्वयं को आत्मा में स्थापित कर लेता है। आत्मिक अनुभव की इस अवस्था को ही तुरीय या अतिचेतन अवस्था कहा जाता है। यह अवस्था मानसिक दृश्य, विचार या भावनाओं से परे है। यह अवस्था मूलतः मन का अतिक्रमण है। यहाँ पर मन का समावेश आत्मिक अनुभूति में हो जाता है।

योग का परम् लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति है। यह मोक्ष आत्म तत्व को जानना है निद्रा की इस परम अवस्था में आत्म तत्त्व को जानने में सहायता मिलती है। निद्रा की यह अवस्था संस्कार शून्यता प्रदान करती है। अर्थात् निद्रा की इस अवस्था में चित्त में कोई नवीन संस्कार नहीं बनता जिसके कारण निद्रा की इस अवस्था को अक्लिष्ट वृत्ति के रूप में स्वीकार किया जाता है।

इस प्रकार आपने निद्रा वृत्ति शीर्षक के अन्तर्गत् निद्रा वृत्ति के विषय में जाना गुणों के अनुसार उसके सात्विक, राजसिक और तामसिक प्रकारों का अध्ययन किया। आपने निद्रा वृत्ति के क्लिष्ट स्वरूप को जानने के पश्चात् अक्लिष्ट स्वरूप को भी जाना। आपने यह भी जाना की निद्रा के अक्लिष्ट स्वरूप को तूरीय या अतिचेतन अवस्था के रूप में भी जाना जाता है, और यही वह अवस्था होती है जिसमें आत्मिक स्वरूप का अवलोकन किया जा सकता है। जहाँ पर निद्रा वृत्ति समाधि में बाधक हो वहाँ इसे क्लिष्ट और जब निद्रा वृत्ति आत्मिक दर्शन में सहायक हो जाती है। तब वही क्लिष्ट वृत्ति अक्लिष्ट हो जाती है।

अब यहाँ पर चित्त की चौथी वृत्ति निद्रा को समाप्त कर अगली पाँचवीं वृत्ति स्मृति के विषय पर ज्ञानार्जन करते हैं, तो आइये स्मृति वृत्ति पर चर्चा शुरू करते हैं। और जानते हैं, स्मृति वृत्ति के विभिन्न पहलूओं को।

अभ्यास प्रश्न भाग–5

1. बहु विकल्पीय प्रश्न

(क) चित्त की चौथी वृत्ति है –

अ.	प्रमाण	स.	निद्रा
ब.	विपर्यय	द.	विकल्प

(ख) निद्रा वृत्ति मूलतः किस गुण पर आश्रित है –

अ.	राजसिक	स.	तामसिक
ब.	सात्विक	द.	राजसिक व तामसिक

(ग) निद्रा के समय किसका अभाव होता है –

अ.	विश्राम	स.	स्वप्न

ब. ज्ञान द. क्रिया

2. रिक्त स्थान की पूर्ति किजिए –

(क) मैं सुख से सोया ऐसा बोध .... निद्रा के पश्चात् होता है।
(ख) निद्रा में मन .... हो जाता है।

(ग) निद्रा की आत्मानुभव की अवस्था को .... अवस्था भी कहते हैं।

3.3.5 स्मृति वृत्ति :

चित्त की पांचवीं वृत्ति स्मृति है। यह वृत्ति पूर्व की चारों वृत्तियों प्रमाण, विपर्यय, विकल्प और निद्रा पर आधारित होती हैं, पूर्व की चारों वृत्तियां किसी न किसी प्रकार के ज्ञान पर आधारित हैं, जिनका चित्त में संस्कार रूप में संग्रह हो जाता है। जब यह संस्कार पुनः विषय रूप में हमारे सामने आते हैं। तब इन्हें स्मृति कहा जाता है, या इस प्रकार कहें कि अनुभूत अर्थात् अनुभव किये गये विषय का संस्कार प्रणाली के माध्यम से वर्तमान में पुनः प्रकट होना, स्मृति है। जब किसी विषय, पदार्थ या कार्य का अनुभव नष्ट हो जाता है, तो वह संस्कार रूप में आपकी छाया को चित्त में छोड़ देता है और समय आने पर वह छाया पुनः विषय का रूप धारण कर स्मरणात्मक ज्ञान के रूप में हमारे सामने प्रकट हो जाती है। स्मृति वृत्ति अपने जनक अनुभव के द्वारा अर्जित सम्पत्ति का ही उपयोग करती है। जिस प्रकार एक पुत्र अपने पिता की छोडी हुई सम्पत्ति का उपयोग पूरे अधिकार के साथ कर सकता है। इसी प्रकार स्मृति अपने पिता अनुभव द्वारा सम्पत्ति में प्राप्त ज्ञान को भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर उपयोग कर सकती है किन्तु उसके द्वारा जो ज्ञान भविष्य में उपयोग किया जायेगा वह उस अनुभव से कम या उसके बराबर ही होगा वह उस अनुभव ज्ञान से कभी भी अधिक कहीं हो सकता। जैसे यदि हम किसी पर्यटन स्थल से घूमकर आते हैं, और उसके विषय में किसी को बताते हो तो हम बस उतना ही बता सकते ही जितना की हमने देखा हम उससे कम तो बता सकते है, किन्तु अधिक नहीं।

अन्य चित्त वृत्तियों की भाँति यह वृत्ति भी त्रिगुणात्मक होती है, अर्थात् सात्त्विक स्मृति सुख कारक होती है, जैसे पूर्व में किसी सुख की याद आते ही हमें आनन्द का अनुभव होता है। राजसिक स्मृति मोह स्वरूप होती है, जैसे किसी प्रियजन की स्मृति होते ही मोह उत्पन्न होगा तथा तामसिक स्मृति दुःख देने वाली होती है, जैसे कोई दुःख का अनुभव हमें जैसे ही याद आता है। हमें तुरन्त वर्तमान में भी दुःख की अनुभूति होने लगती है।

जैसा की हम पहले कह चुके हैं कि स्मृति पूर्व की चारों वृत्ति पर आधारित होती है। अतः हम कह सकते हैं कि स्मृतियाँ सभी प्रकार के अनुभवों से उत्पन्न होती हैं, जैसे प्रमाण रूप अनुभव, विपर्यय रूप अनुभव, विकल्प रूप अनुभव तथा निद्रा रूप अनुभव स्मृति मुख्य रूप से दो प्रकार की होती है –

स्मृति

भावित स्मृति अभावित स्मृति

आइये अब स्मृति के इन दोनों प्रकारों की क्रमशः कुछ विस्तार से जानते हैं।

(क) भावित स्मृति : जिस स्मृति का विषय कल्पित या अयथार्थ होता है, उसे भावित स्मृति कहते हैं। यह स्मृति मुख्यतः स्वप्नावस्था में उत्पन्न होती है, जैसे यदि आज हम किसी विशेष स्थान पर घुमने गये जहां पुराने किले और महल थे यह एक ऐतिहासिक स्थल था। अब यदि हम घुमकर आने के बाद विश्राम करते हैं, और हमें नींद आ जाती है नींद में हम पुनः उन्हीं किले और महलों को देखते है। किन्तु अब स्वप्नावस्था में वे महल व किले हमें वैसे ही नहीं दिखाई देते जैसे की हमने देखे थे अब वह हमें कुछ या बहुत कुछ अलग दिखाई देते हैं। स्मृति के इस रूप को ही भावित स्मृति कहा गया है। इस स्मृति में अनुभव कि गयी घटना के घटनाक्रम में विसंगति होती है।

(ख) अभावित स्मृति : जिस स्मृति का विषय यथार्थ व अकल्पित हो वह अभावित स्मृति कहलाती है। यह स्मृति जागृत अवस्था में कार्य करती है, जैसे यदि हम भावित स्मृति के उदाहरण के पहले हिस्से को ले जहां तक हम ऐतिहासिक स्थल को घुमकर आये थे। उसके बाद यदि लौटकर हम घर आकर अपने मित्रों या भाई बहनों को उस ऐतिहासिक स्थल के बारे में बताते है तो हमारी स्मृति के द्वारा बताया गया सारा विवरण सहीं होगा उसमें कुछ भी कल्पित नहीं होगा और उसके घटनाक्रम में भी कोई विसंगति नहीं होगी। इस स्मृति को ही अभावित स्मृति का नाम दिया गया है।

ये स्मृति के दो प्रकार है, जो आपने अभी समझे। योग के अनुसार संस्कार अचेतन स्मृतियाँ है। ये स्मृतियाँ तर्क की कसौटि पर कसी नहीं जा सकती अर्थात् इन स्मृतियों को तर्क के द्वारा समझा या समझाया नहीं जा सकता। इन स्मृतियों का केवल यथार्थ या कल्पिनिक अनुभव ही किया जा सकता है, जिन्हें की योगदर्शन ने भावित व अभावित स्मृति कहा गया है।

स्मृति के विषय में जानने के पश्चात् अब हम चित्त की वृत्तियों के क्लिष्ट और अक्लिष्ट स्वरूप के अन्तर्गत स्मृति के क्लिष्ट और अक्लिष्ट स्वरूप पर चर्चा करते हैं। सबसे पहले हम स्मृति के क्लिष्ट अर्थात् क्लेश कारक स्वरूप पर चर्चा करते हैं। स्मृति अन्य वृत्तियों की भाँति ही त्रिगुणात्मक है। यह हम जान चुके है। अतः इन तीनों गुणों के फलस्वरूप हमें जो सुख, मोह और दुःख की स्मृति होती है। वह क्लिष्ट होती है। यहाँ पर आपके मन में एक प्रश्न उठ रहा होगा कि सुख वाली स्मृति क्लिष्ट कैसे? यहाँ पर हम जिस सुख कारक स्मृति की बात कर रहे है वह है सांसारिक भोग से उत्पन्न क्षणिक सुख अनुभूति की स्मृति है जो बार–बार हमारे चित्त में उस सांसारिक सुख को प्राप्त करने के लिए नवीन संस्कारों को चित्त पर आरोपित करती रहती है। जिससे चित्त मलिन होता जाता है जैसे अपने किसी प्रियजन के साथ बिताये कुछ सुख के पलों को बार–बार यदि करने से हमें क्षणिक सुख तो मिलता है, किन्तु बाद में उस पल के दोबार न आ पाने पर दुःख भी होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि जो स्मृतियाँ सुख कारक हाती है। वह मात्र कुछ क्षण के लिए ही सुख प्रदान करती है। बाद में वे भी दुःख उत्पन्न करने लगती हैं।

अब बात करते ही अक्लिष्ट स्मृति की अक्लिष्ट स्मृति के अन्तर्गत् ऐसी सुख कारक स्मृतियाँ आती है, जो हमेशा आनन्द प्रदान करती है। जैसे – जब कभी हम किसी मन्दिर में ईश्वर की भव्य मूर्ति के दर्शन करके रोमांचित हो उठते हैं और बाद में पुनः उस भव्य विग्रह के स्मरण हो जाने पर हमारा रोम–रोम पुलकित हो उठता है। यह आनन्द जब तक रहता है, तब तक सुख प्रदान कता है। स्मृति में दोबारा उस आनन्द को प्राप्त करने के लिए दुःख का अनुभव नहीं होता अपितु ईश्वर दर्शन के लिए पिपासा बढ़ जाती है, तथा चित्त सात्विक कर्मों की ओर गतिशील हो जाता है। तब व्यक्ति के दैनिक कमो में आसन

प्राणायाम, ध्यान, जप, स्वाध्याय आदि सात्विक क्रियायें बढ़ जाती है, और यह सात्विक कर्म उसे सम्प्रज्ञात समाधि के पक्ष की ओर अग्रसारित करते हैं। यही स्मृति का अक्लिष्ट स्वरूप है।विधार्थीयों आपने स्मृति वृत्ति शीर्षक के अन्तर्गत् सबसे पहले स्मृति के बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त की उसके बाद स्मृति के दो प्रकारों को समझा और फिर अंत में स्मृति के क्लिष्ट और अक्लिष्ट स्वरूप को समझा। अतः हम आशा करते हैं, कि आपको स्मृति वृत्ति के विषय पर पर्याप्त जानकारी प्राप्त हो चुकि होगी। स्मृति वृत्ति की चर्चा के समाप्त होने पर चित्त की वृत्तियों वाली इस इकाई का मुख्य भाग भी समाप्त होता है।

अभ्यास प्रश्न भाग–6

1. सत्य/असत्य बताइए –

   (क) चित्त की पांचवीं वृत्ति स्मृति है।
   (सत्य/असत्य)

   (ख) स्मृति वृत्ति भी त्रिगुणात्मक हैं।
   (सत्य/असत्य)

   (ग) स्मृति अन्य चारों वृत्तियों पर आधारित होती है।
   (सत्य/असत्य)

2. एक शब्द में उत्तर दिजिए –

   (क) किस प्रणाली के द्वारा अनुभव किया गया ज्ञान वर्तमान में स्मृति के रूप प्रकट होता है?

   (ख) जिस स्मृति का विषय कल्पित हो उसे कैसी स्मृति कहते हैं?

   (ग) किस स्मृति में अनुभव कि गयी घटना के घटनाक्रम में विसंगति नहीं होती।

3.4 सारांश :

चित्त की वृत्तियाँ शीर्षक वाली उक्त इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप चित्त सम्बन्धि मूलभूत ज्ञान को पूर्णतः प्राप्त कर चुके हैं। उक्त इकाई के अन्तर्गत अपने चित्त की पांच वृत्तियों प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति का पर्याप्त अध्ययन प्राप्त किया। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपके मन में उठने वाली चित्त वृत्तियों के सम्बन्ध की समस्त जिज्ञासायें शान्त हो चुकि होगी। वास्तव में चित्त वृत्तियां त्रिगुणात्मक होने से मानव चित्त को तीन प्रकार से प्रभावित करती है, चित्त पर पड़ने वाला वृत्तियों का यह त्रिगुणात्मक प्रभाव संस्कार के रूप में चित्त पर आरोपित होता है, जिससे चित्त अपने प्रकाश को पूर्णरूप से फैलाने में असमर्थ हो जाता है, और संस्कार रूपी मलिनता के आवरणों से पूर्णरूपेण ग्रसित कर लिया जाता है, जिससे मानव का बाह्य व्यवहार भी कलुषित हो जाता है। और वह निरन्तर पतन की ओर अग्रसर रहता है, उसके जीवन का न तो कोई लक्ष्य निर्धारित होता है, और न ही उसका जीवन किसी निर्धारित पथ पर चल पाता है। चित्त की ये वृत्तियाँ उसे निरन्तर चंचल बनाये रखती है, उसका चित्त निरन्तर विषयों के प्रति आकर्षित रहता है, और विषय के प्रति प्रतिक्षण बदलता रहता हैं। चित्त वृत्तियों का वास्तव में यहीं स्वभाव है। वह चित्त को प्रति क्षण चंचल बनाये रखती है। वृत्तियों की चंचलता से जब चित्त निरन्तर अधोगामी बना रहता है तब इन वृत्तियों के इस स्वभाव को ही क्लिष्ट अर्थात् क्लेश कारक कहा गया है। किन्तु ये चित्त वृत्तियाँ कभी–कभी ऐसे संस्कार भी पैदा करती है जो आगे चलकर चित्त को संस्कार मुक्त करने में सहायक होते है। तब वृत्तियों के इस

स्वभाव को अक्लिष्ट या अक्लेश कारक कहते हैं। हलांकि ये भी संस्कार पैदा करती है किन्तु ये संस्कार अन्य मलिन संस्कारों को नष्ट करने में सहायक होते है। जैसे भक्ति, दया, करुणा, प्रेम आदि सात्विक संस्कार ये सात्विक संस्कार ही आगे चलकर चित्त को पूर्ण रूप से संस्कार मुक्त करने में सहायक होते है। जिससे साधक को योग के परम् लक्ष्य असम्प्रज्ञात समाधि की प्राप्ति होती है।

3.5 पारिभाषिक शब्दावली :

1. गौणभाव – निम्न या नीच भाव
2. अदृष्ट – जो देखा न गया हो।
3. स्वैच्छिक – अपनी ईच्छा से
4. यथार्थ – वास्तविक
5. दिगम्बर – निर्वस्त्र
6. अतिक्रमण – सीमाओं को तोड़ना
7. पिपासा – पाने की इच्छा

3.6 अभ्यास प्रश्न के उत्तर :

(उत्तर) अभ्यास प्रश्न भाग–1

1. (क) पांच (ख) संस्कार (ग) योग
2. (क) जब चित्त इन्द्रियों के माध्यम से विषय के सम्पर्क में आता है तब यह चित्त उस विषय का ही आकार ग्रहण कर लेता है। चित्त के द्वारा विषय के आकार को ग्रहण करने की यह घटना ही चित्त की वृत्ति कहलाती है।
   (ख) मनुष्य को योग की ओर प्रवृत्त करने वाली वृत्ति के स्वरूप को अक्लिष्ट वृत्ति कहते हैं।
   (ग) क्लिष्ट वृत्ति से उत्पन्न संस्कार चित्त को मलिन कर देते हैं।

(उत्तर) अभ्यास प्रश्न भाग –2

1. (क) चित्त (ख) ज्ञाता (ग) प्रमाण
2. (क) जो कारण दोषों से रहित हो, अन्य ज्ञान से बाधित न हो पूर्व से अज्ञात पदार्थ का ज्ञान कराता हो उसे प्रमाण कहते हैं।
   (ख) ज्ञान की उत्पत्ति के तीन कारक निम्न हैं–
   (1) प्रमाता (2) प्रमेय (3) प्रमाण
   (ग) वेदान्त दर्शन के अनुसार प्रमाण छः हैं –
   प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापत्ति, अनुपलब्धि
3. (क) सत्य (ख) असत्य (ग) सत्य
4. (क) ब (ख) ब (ग) द

(उत्तर) अभ्यास प्रश्न भाग –3

1. (क) मिथ्या (ख) विपर्यय (ग) पांच
2. (क) महामोह (ख) अक्लिष्ट (ग) अंधतामिस्त्र

(उत्तर) अभ्यास प्रश्न भाग –4

1. (क) शब्द ज्ञान से उत्पन्न होने वाला सत्य वस्तु शून्य विकल्प है।
   (ख) विकल्प का सम्बन्ध व्यर्थ के विचारों से है।
   (ग) विकल्प वृत्ति हमारे विचारों को स्वार्थपूर्ण स्थूल बना देते हैं।
2. (क) सत्य (ख) असत्य (ग) सत्य

(उत्तर) अभ्यास प्रश्न भाग –5

1. (क) स (ख) स (ग) ब
2. (क) सात्विक (ख) अन्तर्मुखी (ग) तुरीय

(उत्तर) अभ्यास प्रश्न भाग –6

1. (क) सत्य (ख) सत्य (ग) सत्य
2. (क) संस्कार (ख) भावित (ग) अभावित

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. श्री वास्तव, डॉ॰ सुरेशचन्द्र,(2008) पातंजलयोग दर्शनम्, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
2. मिश्र, डॉ॰ जगदीशचन्द्र, (2008) भारतीय दर्शन, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
3. दासगुप्त, सुरेन्द्रनाथ (2008) भारतीय दर्शन का इतिहास भाग–1 अनु॰ कलानाथ शास्त्री व सुधीर कुमार, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
4 तीर्थ, स्वामी ओमानंद, (सम्वत्–2054), पातंजल योग प्रदीप, गीता प्रेस, गोरखपुर

3.8 सहायक/उपयोगी पाठय सामग्री :

1. योगभ्यास का मूलाधार, लेखक – स्वामी शिवानंद, प्रकाशक – दिव्य जीवन संघ प्रकाशन
2. योगदर्शन, लेखक– परमहंस निरंजनानंद, प्रकाशक – श्री पंचदशनाम परमहंस अलखबाड़ा, बिहार
3. कल्याण का योगांक, प्रकाशक – गीताप्रेस गोरखपुर
4. विवेकानंद साहित्य, भाग 3 व 4, प्रकाशक – अद्वैत आश्रम, कोलकत्ता
5. योग मीमांसा, त्रैमासिक शोध पत्रिका, प्रकाशक – कैवल्य धाम लोनावला, महाराष्ट्र
6. http://hinduebooks.blogspot.com
7. http://www.hindudharmaforums.com
8. http://sanskritdocuments.org
9. http://archive.org

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न :

प्रश्न 1. चित्त की वृत्तियों से आप क्या समझते है? और इनका योग में क्या महत्व है स्पष्ट करें।

प्रश्न 2. प्रमाण वृत्ति को विस्तार से स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 3. विपर्यय और विकल्प वृत्ति के स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 4. निद्रा व स्मृति वृत्ति के क्लिष्ट एवं अक्लिष्ट स्वरूप का वर्णन करें।